REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514
VOLUME - 8 | ISSUE - 9 | JUNE - 2019

हिंदी लेखिकाओं की आत्मकथाओं में नारी का शिक्षा प्राप्ति हेतु संघर्ष

श्रीमती सविता अण्णाराव नागूर
पीएच्.डी.अनुसन्धान छात्रा, पु.अ.हो.सो.वि.सोलापुर

शिक्षा का अधिकार तो प्रत्येक का 'मानवीय अधिकार' है । नारी को'मानव' के रूप मेंबमुश्किल स्वीकारा जाता है । तो शिक्षा के अधिकार से तो वह वंचित रहेगी ही । पुरुषप्रधान समाज में नारी को शिक्षा से वंचित रखने के कई कारण है । मध्ययुगीन सामाजिक परिवेश, नारी की सुरक्षा का प्रश्न , पुरुषप्रधान व्यवस्था का दबाव , पुरुषों का अहम , नारी को गुलाम बनाकर रखने की मानसिकता आदि कई कारण है जो नारी को शिक्षा से दूर रखते आए हैं । आज अन्यान्य कारणों से स्त्री शिक्षा की हवा बह रही है । अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व और अस्तित्व के निर्माण की अभिलाषा स्त्री में जगने लगी हैं । अन्याय-अत्याचार के खिलाफ लड़ना हो तो शिक्षा जरूरी है, इस बात का एहसास स्त्री को हो रहा है । शिक्षा का महत्व स्त्री समझ रही है । किंतु समाज की मानसिकता में पूरी तरह बदलाव नहीं आया । इस कारण 'स्त्री शिक्षा' का मार्ग आज भी काँटों भरा ही है । आलोच्य आत्मकथाओं में भी हम शिक्षा प्राप्ति हेतु चल रहा स्त्री का संघर्ष देख सकते हैं ।

मैत्रेयी पुष्पा जी के कस्तूरी कुंडल बसै और गुड़िया भीतर गुड़िया में शिक्षा प्राप्ति के लिए स्त्री का एक जबरदस्त संघर्ष हमें देखने को मिलता है । "बिना शिक्षा हमारी जिंदगी के अंधेरे दूर ना हो सकेंगे " जीवन के इस राज को22 साल की उम्र में जान लेनेवाली कस्तूरी का शिक्षा संघर्ष इन आत्मकथाओं में चित्रित है । स्वातंत्र्यपूर्व काल में तो नारी और शिक्षा जैसे नदी के दो तीर की तरह थे । लड़कियों को ही पढ़ाया नहीं जाता था वह प्रौढ़ शिक्षा तो दूर की बात है । मैत्रेयी की माताजी कस्तूरी विधवा थी । घर में डेढ़ साल की नन्हीं बच्ची और अपाहिज बूढ़े ससुर थे । इन जिम्मेदारियों को निभाते हुए कस्तूरी ने शिक्षा प्राप्त करने की ठान ली । पुरुष प्रधान समाज व्यवस्था में स्त्री पर हो रहे अन्याय-अत्याचारों के विरोध में शक्ति अर्जित करनी हो तो शिक्षा ही एकमात्र उपाय है । जीवन की मुसीबतों को झेलने के लिए शिक्षा पाकर ही हम आत्मनिर्भर बन सकते हैं, इस सत्य को कस्तूरी ने जान लिया था । केवल अपने ही नहीं बच्ची और परिवार की भलाई को केंद्र में रखकर कस्तूरी ने आत्मनिर्भर होने का यह संकटपूर्ण रास्ता चुन लिया था । शिक्षा के इस रास्ते पर कस्तूरी के

लिए पहला संकट था स्कूल का । उनके गाँव में एक भी स्कूल नहीं था । इस बात का दुःख जताते हुए कस्तूरी सोचती है - "यह गाँव भी कैसा है , मंदिर दो-दो हैं, स्कूल एक भी नहीं । आज के नेता कहते हैं - पढ़ो-पढ़ाओ, यही पुण्य है - मगर कहाँ पढ़ो-पढ़ाओ?..... मास्टर कौन? कॉपी, कलम, स्याही का खर्चा कहाँ? तमाम तरह के झंझट ।" [1] इस संकट से मार्ग निकालते हुए कस्तूरी ने इगलास गाँव जाकर पढ़ने का ठान लिया । समाज और गाँववालों के विरोध में जाकर एक विधवा स्त्री घर से बाहर पाँव रखते हुए दूसरे गाँव में जाकर पड़ने लगी । साथ ही अपनी छोटी बच्ची का बचपना मिटाकर उसे भी पढ़ने लिखने में उलझा दिया । कस्तूरी का यों गाँव के बाहर पढने जाना समाज की दृष्टि में एक अक्षम्य अपराध था । पूरा समाज और गाँव कस्तूरी के खिलाफ हो उठा । उसकी माँ तक ने उसका साथ नहीं दिया । पहली प्रतिक्रिया थी गाँव की स्त्रियों की - "यह रांड क्या हुई , सांड हो गई । न छोरी पर ममता , न बूढे ससुर का रहम । 'पढ़ाई-पढाई' का भजन करती हुई दोनों को रौंद रही है । [२] गाँव की स्त्रियों की निंदा और पुरुषों के ताने सुनकर भी कस्तूरी अपने निर्णय से पीछे हटी नहीं । लोग उनके चरित्र पर उँगली उठा रहे थे । तरह तरह की बातें कर रहे थे । आरोपों के साथ ही उनके रास्ते में अड़चनें भी पैदा कर रहे थे । किंतु कस्तूरी जी अपनी जिद पर अड़ी रही । लोगों की सोच को अनदेखा करते हुए पूरे आत्मविश्वास के साथ कस्तूरी अपने बनाए रास्ते पर चलती रही । स्त्री मुक्ति के इस रास्ते पर चलना हो तो अपमान और शोषण का सामना करना पड़ेगा यह कस्तूरी जानती थी । इसके खिलाफ लड़ना हो तो लडैत और कठकरेज होना आवश्यक है , यह भी कस्तूरी ने जान लिया था । अपने ध्येय और लक्ष्य के प्रति अविचल रहकर कस्तूरी अपना मार्ग तय करती रही । "नंगे पाँव रास्ता नापति स्त्री की सारी दौलत किताब-कापियाँ हो गई, जिन की झोली लटकाए वह सूरज और चंद्रमा के साथ समय की परिक्रमा करती रही और धरती के सारे दोषों से दूर होती जाती । "[3] कस्तूरी ने अब किताब-कापियों को ही अपना हमसफर बना लिया था । शिक्षा का मार्ग ही उसे उन्नति की ओर ले जाएगा इसकी उसे आशा थी । इसी संघर्ष के मार्ग चलते आगे जाकर कस्तूरी ने ग्रामसेविका की नौकरी भी हासिल कर ली ।

शिक्षा पाने हेतु कस्तूरी को जो संघर्ष करना पड़ा उसका हम अंदाजा भी नहीं लगा सकते । यह बात भी उतनी ही सच है , कि शिक्षा प्राप्ति के लिए कस्तूरी ने जितने संघर्ष उठाएँ उससे कई गुना ज्यादा बेटी मैत्रेयी को उठाने पड़े। बचपन में स्कूली शिक्षा से लेकर कॉलेज की पढ़ाई तक केवल लड़की होने के कारण उसे अनेक संकटों का सामना करना पड़ा । हर मोड़ पर लड़कों से , अपने अध्यापकों से, अपने सहपाठियों से, इतना ही नहीं अपनी सहेलियों से भी उसे संघर्ष करना पड़ा । बचपन में गाँव से स्कूल जानेवाली वह अकेली लड़की थी । उसके साथ बाकी सब गाँव के लड़के ही थे । स्कूल दूर होने के कारण माँ ने जगदीश के साथ साईकिल पर जाने की व्यवस्था कर दी थी । इसी जगदीश ने उसके साथ घिनौनी हरकत की थी जिस कारण, मैत्रेयी के मन में डर उत्पन्न हुआ था । इसी डर से स्कूल तक तक का रास्ता नाँपना भी मैत्रेयी को बहुत कठिन लगता था । इसी प्रकार का अनुभव मैत्रयी को कॉलेज के प्रिंसिपल से भी मिला । इसके खिलाफ मैत्रेयी ने आवाज उठाई, तो उसे ही रेस्टिकेट करने की धमकी मिली । माँ कस्तूरी ने भी भविष्य का विचार करते हुए मैत्रेयी को ही माफी माँगने के लिए कहा। किंतु मैत्रेयी पीछे नहीं हटी। अपने तीखे अंदाज में मैत्रेयी कहती है - "अगर यह स्कूल व्यभिचारीयों और अन्यायी शिक्षकों का अड्डा है तो यह मेरे योग्य स्कूल नहीं। थू है यहाँ के शिक्षा पर । "[4] इतना ही नहीं आगे की शिक्षा में मैत्रेयी को तो अपने सहपाठी सहेलियों से भी संघर्ष करना पड़ा । वह सब बड़े बाप की बेटियाँ थी । मैत्रेयी के साधे रहन-सहान पर हमेशा व्यंग्य कसती थी । मैत्रेई की बेइज्जती करने में कहीं चुकती नहीं थी। मैत्रेयी का अपमान करना, औरों की नजर में उसे गिराना

यही उनका उद्देश्य होता था । इसी हेतु से लड़कियाँ मैत्रेयी को हर प्रकार से तंग करती थी। मैत्रेयी डँटकर उनका मुकाबला करती थी । इस परिस्थिति में भी मैत्रेयी ने अपना मानसिक संतुलन बनाए रखते हुए पढ़ाई जारी रखी ।

सासनी गुरुकुल में तो समस्याएँ मुंह बाए खड़ी थी। वहाँ मैत्रेयी सहित सभी लड़कियाँ सुबह चार बजे उठती थी । शौच के लिए डेढ फर्लांग दूर जाती थी । उनहें नहाने के लिए ठंडा पानी मिलता था । खाने की भी कुछ अच्छी व्यवस्था नहीं थी । कभी-कभी तो उपवास ही करना पड़ता । इन सारी समस्याओं से जूझते हुए मैत्रेयी ने अपनी पढ़ाई की थी ।

कौसल्या बैसंत्री जी और उनके परिवार की लड़ाई तो दोहरे स्तर की थी । शिक्षा के मार्ग में लड़की के लिए उसका लड़की होना ही सबसे बड़ी अड़चन है । उस पर अगर समाज जिसे निचली जाति मानता है , ऐसी जाति में उसका जन्म हुआ तो लड़की का शिक्षा पाना बिल्कुल ही असंभव बन जाता है । शिक्षा पाने के लिए वह जितने संघर्ष को झेलती है शिक्षा प्राप्ति के बाद उससे कई गुना ज्यादा कठिनाइयों का सामना उसे करना पड़ता है । इसी कारण डरकर कौसल्या बैसंत्री जी की माता-पिता जी ने अपनी बड़ी बेटी को नहीं पढ़ाया । डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर जी के विचारों से प्रभावित होकर उन्होंने अपने बच्चों को पढ़ाने की ठान ली थी किंतु बड़ी बेटी को ज्यादा पढ़ा नहीं सके । इसका कारण स्पष्ट करते हुए कौशल्या जी लिखती है - "माँ चाहती थी कि बहन पढ़ कर कम से कम प्राइमरी शिक्षिका बने। परंतु उनका विवाह करना भी जरूरी था, क्योंकि ज्यादा बड़ी होने पर लड़का मिलना मुश्किल काम था । उपजातियों में भी विवाह नहीं होते थे , इसलिए भी विवाह के लिए दिक्कत आती थी ।"[5] इस तरह हर लड़की की पढ़ाई उसके शादी में बड़ी अड़चन मानी जाती है । एक तो पढ़ाई करने में शादी की उम्र निकल जाती है और दूसरी बात लड़की से ज्यादा या कम से कम उसके जैसा पढ़ा-लिखा लड़का वह भी अपनी जाति में मिलना मुश्किल हो जाता है । इस सोच के कारण कौसल्या जी की बड़ी बहन को उनके माता-पिता जी ने ज्यादा पढ़ाया नहीं । आगे चलकर अपनी गलती समज आने पर उन्होंने समय के साथ बदलते हुए अपने अन्य बेटियों को बड़ी हिम्मत से उच्च शिक्षा दिलाई । समाज का विरोध सहते हुए बेटियों को पढ़ाया । ऐसे बहुत कम उदाहरण समाज में देखने को मिलते हैं ।

किंतु उनका यह रास्ता बिल्कुल भी आसान नहीं था । कौसल्या जी का परिवार दलित वर्ग से आता था । आर्थिक दुरावस्था के कारण इन लोगों को रोजाना काम पर जाकर ही अपने रोज के खाने का इंतजाम करना पड़ता था । अज्ञानतावश और वैद्यकीय असुविधाओं के कारण घर में बच्चों की संख्या बहुत होती थी । अतः बड़े बच्चों को एक तो अन्य बच्चों की देखरेख करनी पड़ती या फिर घर के कामों में हाथ बटाना पड़ता और कई बच्चों को तो पैसे कमाने के लिए काम पर भी जाना पड़ता था । ऐसी परिस्थिति में स्कूल जाकर पढ़ना बहुत दूर की बात थी । किंतु कौसल्या जी की माँ चाहती थी कि उनके बच्चे पढ़े लिखे। 'पढ़ो-लिखो, शिक्षित बनो और आगे बढ़ो' डॉक्टर अंबेडकर जी के इन विचारों का उन पर बहुत प्रभाव पड़ चुका था । बच्चों की पढ़ाई में किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न ना हो इसलिए कौसल्या जी के माता-पिता स्वयं कामों में खटते रहते थे । उनके इसे जिद और जुझारूपन के कारण ही कौसल्या जी और उनके भाई-बहन उच्च शिक्षा पा सके । शिक्षा का यह मार्ग कौसल्या और उनके माँ-बाप के लिए बहुत ही संघर्षपूर्ण रहा । किताबों से लेकर बच्चों की फीस भरने तक हर बात के लिए उन्हें बहुत कष्ट उठाना पडा । कौसल्या जी लिखती है - "फीस बारह आने थी, परंतु उस वक्त बारह आने देना भी माँ-बाबा के लिए कठिन था।"[6] इतना ही नहीं कौसल्या जी के पास अन्य लड़कियां की तुलना पहनने के लिए अच्छे कपडे भी नहीं थे । वह सादा अल्यूमीनियम के डिब्बे

में रोटी और गुड लेकर जाती थी । अन्य लड़कियाँ पीतल की टिफिन में पूरीयाँ ,पराठे लाते थे । दस साल की छोटी कौसल्या की मनोव्यथा व्यक्त करते हुए कौसल्या जी लिखती है - " मैं अल्यूमीनियम के डिब्बे में रोटी लाती थी । मैं लड़कियों के सामने अपना डिब्बा नहीं खोलती थी । मुझे अपने घटिया डिब्बे और घटिया रोटी को उनके सामने खोलने में शर्म आती थी । मैं दीवार की ओर मुँह करके खाना खाती थी ताकि कोई देख न ले । उनके खाने की खुशबू और खाना देखकर मैं ललचा जाती थी। सोचती थी, ऐसा खाना मुझे कब नसीब होगा ।"[7]आर्थिक विवंचना के कारण कौशल्या जी को इस प्रकार बार-बार न्यूनता महसूस होती थी किंतु ऐसे प्रसंगों से उभरते हुए शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करते हुए उन्होंने अपनी पढ़ाई जारी रखी । बच्चों के स्कूल के खर्चे के लिए उनकी माँ ने कई बार अपने जेवर गिरवी रख कर पैसों का इंतजाम किया था । आर्थिक विवंचनाओं के साथ ही सामाजिक मानसिकता भी कौशल्या की शिक्षा में आड़े आती थी । जब कौसल्या और उनके भाई-बहन स्कूल पढ़ने जाते तो केवल उच्च वर्णिय ही नहीं बल्कि उनके अपने जाति के लोग भी उन्हें बहुत सताते थे । आते-जाते ताने मारते थे । उन्हें सताने के लिए रोज नए-नए हथकंडे अपनाते थे । इस संदर्भ में कौसल्या जी लिखती है - "हमारे दरवाजे के पास लोग रात में टट्टी-पेशाब तक कर जाते थे, शरारत के तौर पर यह जतलाने के लिए कि हम क्यों पढते हैं। माँ बड़बड़ाती हुई टट्टी-पेशाब साफ करती , लेकिन उन्होंने हार नहीं मानी ।"[8] दलित होकर भी यह बच्चे पढ़ रहे हैं यह देख उनके रिश्तेदार, बस्ती के लोग उनसे जलते थे । उनका उपहास उड़ाते थे । कौशल्या जी को भी स्कूल में हमेशा यह डर लगा रहता था कि कहीं उनकी जाति का भेद खुलकर सामने ना आ जाए । जाति को लेकर कोई ना चिढाए , अपमान ना करें, शिक्षा बीच में छोड़नी ना पड़े इसी डर की छाया में कौसल्या जी स्कूल आती-जाती थी । कौसल्या जी का साइकिल पर कॉलेज जाना भी इन लोगों को अखरता था । औरतें कौसल्या जी को हतोत्साहित करने के लिए गंदी बातें करती थी । वह कहती - " इतनी बड़ी हो गई है, थन लटक रहे हैं, शादी नहीं हुई, बूढी होंगी तब करेंगी क्या? ... कोई कहती, अरे जाने दो । अभी तक क्या कोरी रह गई हैं ?इतने यार-दोस्त आते हैं घर में, तो क्या कुछ नहीं होता होगा?"[9] इतनी गंदी सोचवाले लोगों के बीच रहकर भी कौसल्या जी का पूरा परिवार उच्च शिक्षित हो गया यह सच में काबिले तारीफ बात है । तारीफ की असली हकदार तो कौसल्या जी की माताजी भागेरथी ही है । ना उन्होंने केवल अपने बच्चों को पढ़ाया बल्कि 'प्रौढ़-शिक्षा' के अंतर्गत खुद भी पढ़ना-लिखना सीख लिया । इतना ही नहीं, प्रौढ़-शिक्षा की कक्षा वह अपने ही घर में रखती थी । साथ ही दिया-बत्ती के केरोसिन का खर्च भी स्वयं ही करती थी । सच में भागेरथी बड़ी हिम्मतवाली औरत थी । महार जैसे अस्पृश्य जाति के होते हुए भी कौसल्या जी के माता-पिता ने गरीबी से जूझते हुए, जातीय प्रताड़ना से लड़ते हुए, अंधविश्वास का विरोध करते हुए डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर जी के दिखाए मार्ग पर चलते रहे । अपने बच्चों में आत्मविश्वास जगा कर उन्हें स्वावलंबी जीवन जीने के लिए काबिल बनाया । अतः हम कह सकते है कि बैसंत्री जी का जीवन स्वातंत्र्यपूर्व काल के एक दलित परिवार के शिक्षा संघर्ष का दस्तावेज है ।

धर्म, जात और रीति-रिवाज लड़कियों की शिक्षा के आड़े आते हैं , इसका और एक उदाहरण हमें 'पिंजरे की मैना' में देखने को मिलता है । चंद्रकिरण जी अपना अनुभव कथन करते हुए कहती है कि उनके पिता उन्हें मिशनरी स्कूल में पढ़ाना चाहते थे । उनके बचपन में ईसाई मिशनरियों द्वारा चलाए जानेवाले स्कूलों का अच्छा बोलबाला था । इस कारण उनके पिताजी बेटी को अच्छी अधुनतान शिक्षा देना चाहते थे । किंतु वह स्कूल ईसाइयों द्वारा चलाई जाती है, इस कारण से उनकी माताजी का विरोध था । चंद्रकिरण जी की माता जी हिंदू सनातनी विचारोंवाली थी । अपना विरोध जताते हुए वह कहती है - "मैं निक्की को ईसाई स्कूल में पढ़ने

नहीं भेजूँगी । तुम कैसे आरिया हो लड़की को ईसाई स्कूल में पढ़ा कर ईसाई बनाओगे ?"[10] इस प्रकार चंद्रकिरण जी को उस वक्त के सबसे अच्छे स्कूल में शिक्षा पाने का अवसर गवाने की नौबत आन पड़ी थी । वास्तव में इन स्कूलों में अंग्रेजी एवं आधुनतान विषयों की शिक्षा मिलती थी । इन स्कूलों में पढ़कर कई लोगों ने अपना भविष्य बनाया था । माँ के धार्मिक कट्टरतावाद के कारण चंद्रकिरण जी का उस स्कूल में पढ़ पाना मुश्किल हो गया था, किंतु उनके पिताजी ने चंद्रकिरण का साथ दिया । माँ से चोरी-छुपे चंद्रकिरण अकेली जाकर अपना दाखिला करवा दिया ।

पुरुषों का अहं तो नारी शिक्षा के मार्ग का सबसे बड़ा रोड़ा बना हुआ है । एक उच्च शिक्षित और ऊँचे औहदपर कार्य करनेवाले सत्यदेव अग्निहोत्री जी भी अपनी पत्नी कृष्णा जी के पढ़ने के खिलाफ थे । कृष्णा अग्निहोत्री जी शादी के बाद एम. ए. की परीक्षा देनी चाहती थी । किंतु अग्निहोत्री जी इसके विरोध में थे । अपना संघर्ष प्रकट करते हुए कृष्णा जी लिखती है - "वह भयभीत थे कहीं पढ़-लिखकर मैं इतनी आत्मनिर्भर न हो जाऊँ कि उनकी तानाशाही से मुक्त होने का रास्ता ढूँढ लूँ ।"[11] वे रोज अनवर (ड्राइवर) से कहते - "इन्हें परीक्षा हेतु तुम विश्वविद्यालय नहीं ले जाओगे ।"[12] किंतु निरंतरसंघर्ष से कृष्णा जी ने एक मिसाल रख दी । कठिनाइयों का सामना करते हुए उन्होंने आठ मील दूर विश्वविद्यालय जाकर परीक्षा दे दी और अपना एम. ए. पूरा कर लिया । संघर्ष से प्राप्त यही शिक्षा आगे चलकर कृष्णा जी के संघर्ष के दिनों में सहायक बन गई । नारी शिक्षा की जो दुर्दशा आज दिखाई देती हैं उसके पीछे पुरुषों का अहं यही एकमात्र प्रमुख कारण बना है । पुरुषप्रधान मानसिकता के लोग नारी को अपना गुलाम बनाकर रखना चाहते हैं । नारी शिक्षा से नारी का स्वत्व जाग उठा तो वह खुद को साबित करने के लिए संघर्ष करेगी यह भाँपकर ही पुरुषों ने नारी को आजतक शिक्षा से वंचित रखा था ।

अक्षर ज्ञान ना होना, अशिक्षा यह नारी जीवन के सबसे बड़े अभाव हैं । जिस कारण उसे जीवन में बड़ी विपदाओं का सामना करना पड़ता है । शिक्षा का अभाव नारी-जीवन को शून्य बना देता है । शिक्षा के आगमन से नारी का जीवन कहाँ से कहाँ पहुँच सकता है , इसका उदाहरण है सुशीला राय । काला रंग और बाँझपन इन दो बातों ने सुशीला जी के जीवन को नरक बना दिया था । ऊपर से वह पूरी तरह अनपढ़ थी । सुशीला ने बचपन में कभी स्कूल का मुँह नहीं देखा था। उम्र के चौबीस वर्षों तक वह पूरी तरह निरक्षर थी । रंग, बाँझपन और निरक्षरता के कारण ससुरालवाले उसकी उपेक्षा करते थे । इस उपेक्षा के चलते उन्हें अपनी निरक्षरता का तीव्रता से एहसास हो गया और स्वयं पढ़ने के लिए संघर्ष करने लगी । शिक्षा में रुकावटें आने पर वह सोचती - "मैंने सुंदर न होने का उलाहना सुन लिया , इसके बाद बच्चा नहीं हुआ तो इसका भी उलाहना सुनकर बर्दाश्त कर लिया, लेकिन पढ़ाई तो अपने परिश्रम से ही कर पाऊँगी । फिर पढ़ाई शुरू करने में देर क्यों करूँ।"[13] गाँव के ही एक लड़के से उन्होंने ककहरा सीखना शुरू किया था । पहले बच्चे के जन्म के बाद भी उन्होंने अपनी पढ़ाई रुकने नहीं दी । अपने भाई को पीहर से बुलाकर उनसे पढती रहती । पढ़ने का जुनून उनके सर इतना चढ़ा था कि घर-परिवार , खेती, रसोई के सारे कामों से छुट्टी पाने पर रात-रात केरोसिन तेल जलाकर उस दिये की रोशनी में उन्होंने अपनी पढ़ाई जारी रखी । उनके इस प्रयत्न में भी अनेक अडचने आती थी । केरोसिन के उपयोग को लेकर उनकी सास उन्हें हमेशा डाँटते हुए कहती - " तुम देर रात तक पढ़ती रहती हो, इससे किरासन तेल का खर्च बढ़ गया है । सो जब तुम्हारे माता-पिता बचपन में नहीं पड़ा पाए तो अब तुम पढ पाओगी ?"[14] सुशीला जी का पढ़ने का इरादा तो पक्का था । इसीलिए उन्होंने भी निश्चय कर लिया था - "क्यों न मुझे खुद तेल मँगाना पड़े लेकिन मैं पढ़ूँगी जरूर ।"[15] इसी जिद और लगन

के बलपर सुशीला राय शिक्षित हुई । जो स्त्री रमेश बाबू के पत्र पढ़ना नहीं आता इसलिए दुःखी होती थी और सोचती थी - "उनका पत्र मैं किसी दूसरे से पढ़ाकर सुनती थी क्योंकि अपने तो मूर्ख थी , काला अक्षर भैंस बराबर थी ।"[16] वही स्त्री आज'आलो आंधारि' पढ़कर खुद की जीवन-कहानी आत्मकथा के रूप में अंकित करती है, क्या इसे हम शिक्षा का प्रतिफल नहीं कह सकते?

सुशीला जी ने अपने रोजमर्रा की जिंदगी में जितनी यातनाएँ-प्रताड़नाएँ सही है वे प्रायः भारतीय ग्रामीण स्त्रियाँ सहती आई हैं । सुशीला जी की लगन, निष्ठा और धीरज का प्रतिफल ही उन्हें अपनी जिंदगी में मिला । उनकी जीवन-कहानी अनेकों निरक्षर ग्रामीण स्त्रियों के संघर्ष की गाथा है । सुशीला जी ने अपने इस संघर्ष में, लड़ाई में पढ़ाई को अपना हत्यार बना लिया । 'पढ़ाना ही आगे बढ़ाना है ' इसका उन्हें बोध हो गया था । उनकी इस शिक्षा-संघर्ष से यह बात द्रष्टव्य होती है कि 'जब स्त्री साक्षर-शिक्षित होती है , तो वह सक्षम और समर्थ भी होती है' । सुशीला जी का शिक्षा-संघर्ष साक्षरता के साथ सक्षम होने की दास्तान है ।

स्त्री-जीवन के हर क्षेत्र में संघर्ष अनिवार्य रूप से मौजूद होता है । फिर शिक्षा क्षेत्र कैसे अपवाद होगा ? रुढि -परंपरा, सामाजिक मान्यताएँ, पुरुषप्रधान सामंती मानसिकता इन सब से संघर्ष करते हुए स्त्री शिक्षा पा रही है यह उज्वल भविष्य के लिए एक आश्वासक बात है ।

संदर्भ

1. मैत्रेयी पुष्पा -कस्तूरी कुंडल बसै, पृष्ठ - 30
2. मैत्रेयी पुष्पा- कस्तूरी कुंडल बसै, पृष्ठ -42
3. मैत्रेयी पुष्पा- - कस्तूरी कुंडल बसै, पृष्ठ -32
4. मैत्रेयी पुष्पा- - कस्तूरी कुंडल बसै, पृष्ठ–126
5. बैसंत्री कौशल्या - दोहरा अभिशाप, पृष्ठ -39
6. बैसंत्री कौशल्या- दोहरा अभिशाप, पृष्ठ -40
7. बैसंत्री कौशल्या- दोहरा अभिशाप, पृष्ठ - 41
8. बैसंत्री कौशल्या- - दोहरा अभिशाप, पृष्ठ-75
9. बैसंत्री कौशल्या- दोहराअभिशाप, पृष्ठ-75
10. सौनरेक्साचंद्रकिरण- पिंजरे की मैना, पृष्ठ - **74**
11. अग्निहोत्रीकृष्णा- लगता नहीं दिल मेरा, पृष्ठ–131
12. अग्निहोत्रीकृष्णा - लगता नहीं दिल मेरा, पृष्ठ - 131
13. राय सुशीला- एक अनपढ कहानी, पृष्ठ - 35
14. राय सुशीला - एक अनपढ कहानी, पृष्ठ -35
15. रायसुशीला- एक अनपढ़ कहानी, पृष्ठ–35
16. राय सुशीला एक अनपढ़ कहानी -, पृष्ठ - 22